न्यायिक सक्रियता, संयम एवं अतिरेक

अर्थ

न्यायिक सक्रियता:

- न्यायिक सक्रियता नागरिकों के अधिकारों की रक्षा में न्यायपालिका की सक्रिय भूमिका को दर्शाती है।
- न्यायिक सक्रियता का अभ्यास सबसे पहले संयुक्त राज्य अमेरिका में शुरूऔर विकसित हुआ।
- भारत में सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालयों को किसी भी कानून की संवैधानिकता की जाँच करने की शक्ति प्राप्त है और यदि ऐसा कानून संविधान के प्रावधानों के साथ असंगत पाया जाता है, तो अदालत कानून को असंवैधानिक घोषित कर सकती है।
- यह ध्यान दिया जाना चाहिये कि अधीनस्थ न्यायालयों के पास कानूनों की संवैधानिकता की समीक्षा करने की शक्ति नहीं है।

मूल (Origin):

- न्यायिक सक्रियता शब्द वर्ष 1947 में इतिहासकार आर्थर स्लेसिंगर जूनियर द्वारा गढ़ा गया था।
- भारत में न्यायिक सक्रियता की नींव न्यायमूर्ति वी.आर कृष्ण अय्यर, न्यायमूर्ति पी.एन. भगवती, न्यायमूर्ति ओ.चिन्नप्पा रेड्डी और न्यायमूर्ति डी.ए. देसाई ने रखी थी।

आलोचना:

- न्यायिक सक्रियता ने संसद और सर्वोच्च न्यायालयों के बीच सर्वोच्चता के संबंध में विवाद को जन्म दिया है।
- यह शक्तियों के पृथक्करण, नियंत्रण और संतुलन के नाजुक सिद्धांत को बिगाड़ सकता है।

न्यायिक संयम:

- न्यायिक संयम न्यायिक सक्रियता का विपरीत शब्द है।
- न्यायिक संयम न्यायिक व्याख्या का एक सिद्धांत है जो न्यायाधीशों को अपनी शक्ति के प्रयोग को सीमित करने के लिये प्रोत्साहित करता है।
- संक्षेप में न्यायालयों को कानून की व्याख्या करनी चाहिये और नीति-निर्माण में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिये।
- न्यायाधीशों को हमेशा निम्नलिखित के आधार पर मामलों का निर्णय करने का प्रयास करना चाहिये:
    - संविधान लिखने वालों का मूल उद्देश्य।
    - मिसाल/उदाहरण - एक जैसे मामलों में पिछले फैसले।
- साथ ही अदालत को नीति निर्धारण दूसरों पर छोड़ देना चाहिये।
- यहाँ अदालतें अपने निर्णयों के साथ नई नीतियाँ निर्धारित करने से खुद को "रोक" देती हैं।

न्यायिक सक्रियता की आवश्यकता:

- न्यायपालिका की बढ़ती भूमिका को समझने के लिये उन कारणों को जानना आवश्यक है जिनकी वजह से न्यायपालिका सक्रिय भूमिका निभा रही है।
- सरकार के अन्य अंगों जैसे- कार्यपालिका, विधायिका में बड़े पैमाने पर भ्रष्टाचार।
- कार्यपालिका का अपने काम में कठोर होना और अपेक्षित परिणाम देने में विफल रहना।
- संसद का अपने विधायी कर्तव्यों से अनभिज्ञ होना।
- लोकतंत्र के सिद्धांतों का लगातार क्षरण होना।
- जनहित याचिकाओं द्वारा सार्वजनिक मुद्दों की तात्कालिकता को सामने लाना।
- ऐसे में न्यायपालिका को सक्रिय भूमिका निभाने के लिये मजबूर होना पड़ा। यह न्यायपालिका जैसी संस्था के माध्यम से ही संभव था, जिसमें समाज में विभिन्न गलतियों को सुधारने की शक्तियाँ निहित हैं। लोकतंत्र से समझौते को रोकने के लिये सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालयों ने इन समस्याओं के समाधान की ज़िम्मेदारी ली।
- उदाहरण के लिये जी. सत्यनारायण बनाम ईस्टर्न पावर डिस्ट्रीब्यूशन कंपनी (वर्ष 2004) मामले में न्यायमूर्ति गजेंद्र गडकर ने फैसला सुनाया कि

यदि किसी कर्मचारी को कदाचार के आधार पर बर्खास्त किया जाता है तो एक अनिवार्य जाँच की जानी चाहिये और उसे अपना बचाव करने का अवसर प्रदान किया जाना चाहिये। इस फैसले ने श्रम कानून में नियमों को जोड़ा जिसे कानून द्वारा नज़रअंदाज कर दिया गया।
- इसी तरह विशाखा बनाम राजस्थान राज्य (वर्ष 1997) एक महत्त्वपूर्ण मामला है जो न्यायिक सक्रियता की आवश्यकता की याद दिलाता है। यहाँ सर्वोच्च न्यायालय ने दिशा-निर्देश निर्धारित किये जिनका पालन सभी कार्यस्थलों में किया जाना चाहिये ताकि महिलाओं के साथ उचित व्यवहार को सुनिश्चित किया जा सके। इसने आगे कहा कि इन दिशा-निर्देशों को एक कानून के रूप में माना जाना चाहिये जब तक कि संसद लैंगिक समानता को लागू करने के लिये कानून नहीं बनाती।

न्यायिक सक्रियता के कुछ अन्य प्रमुख मामले हैं:

- **केशवानंद भारती मामला (वर्ष 1973):** भारत के शीर्ष न्यायालय ने घोषणा की कि कार्यपालिका को संविधान के मूल ढाँचे में हस्तक्षेप करने और छेड़छाड़ करने का कोई अधिकार नहीं है।
- **शीला बरसे बनाम महाराष्ट्र राज्य (वर्ष 1983):** इस मामले में एक पत्रकार द्वारा जेल में महिला कैदियों की हिरासत के दौरान हिंसा के संबंध में एक पत्र के माध्यम से सर्वोच्च न्यायालय को सूचित किया गया। न्यायालय ने उस पत्र को एक रिट याचिका के रूप में माना और मामले का संज्ञान लिया।
- **आई.सी. गोलकनाथ एवं अन्य बनाम पंजाब राज्य और अन्य (वर्ष 1967):** सर्वोच्च न्यायालय ने घोषणा की कि भाग- 3 में निहित मौलिक अधिकार इम्यून और इन्हें विधानसभा द्वारा संशोधित नहीं किया जा सकता है।
- **हुसैनारा खातून (I) बनाम बिहार राज्य (वर्ष 1979):** एक समाचार पत्र में प्रकाशित लेखों के माध्यम से विचाराधीन कैदियों के खिलाफ अमानवीय और बर्बरता की स्थिति पर प्रकाश डाला गया। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत, शीर्ष अदालत ने इसे स्वीकार किया और माना कि त्वरित सुनवाई का अधिकार एक मौलिक अधिकार है।
- **ए.के. गोपालन बनाम मद्रास राज्य (वर्ष 1950):** भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने इस तर्क को खारिज कर दिया कि किसी व्यक्ति को उसके जीवन या स्वतंत्रता से वंचित करने के लिये न केवल कानून द्वारा निर्धारित प्रक्रिया का पालन किया जाना चाहिये, बल्कि यह भी कि ऐसी प्रक्रिया निष्पक्ष एवं उचित होनी चाहिये।

न्यायिक संयम:

- न्यायिक संयम सरकार के तीन अंगों- न्यायपालिका, कार्यपालिका और विधायिका के बीच संतुलन बनाए रखने में मदद करता है।
- विधायिका में सरकार द्वारा स्थापित कानून को बनाए रखने के लिये।
- विधायिका और कार्यपालिका को उनके कार्यक्षेत्र में दखल न देकर कर्तव्यों का पालन करने की अनुमति देना।
- नीतियों के निर्माण का कार्य नीति निर्माताओं पर छोड़कर सरकार के लोकतांत्रिक स्वरूप के प्रति सम्मान को चिह्नित करना।

न्यायिक के प्रति रुझान:

- एस.आर. बोम्मई बनाम भारत संघ (वर्ष 1994) मामला इस संबंध में एक प्रमुख उदाहरण है जिसे न्यायपालिका द्वारा न्यायिक संयम दिखाने के रूप में देखा जाता है। फैसले में कहा गया कि कुछ मामलों में न्यायिक समीक्षा संभव नहीं है क्योंकि मामला राजनीतिक होता है। अदालत के अनुसार, अनुच्छेद 356 की शक्ति एक राजनीतिक प्रश्न है, इस प्रकार न्यायिक समीक्षा से इनकार कर दिया। न्यायालय ने कहा कि अगर राजनीतिक मामलों पर न्यायपालिका के मानदंड लागू होते हैं तो यह राजनीतिक क्षेत्र में हस्तक्षेप होगा और न्यायालय ऐसा करने से बचेगा।
- इसी प्रकार अलमित्र एच. पटेल बनाम भारत संघ (वर्ष 1998) मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने दिल्ली की सफाई की ज़िम्मेदारी सौंपने के मुद्दे पर नगर निगम को निर्देश देने से इनकार कर दिया और कहा कि वह केवल अधिकारियों को कानून के अनुसार सौंपे गए कर्तव्य को पूरा करने के लिये कह सकता है।

न्यायिक अतिरेक (Judicial Overreach):

- विधायी और कार्यकारी लापरवाही या अक्षमता का प्रत्यक्ष प्रभाव "न्यायिक अतिरेक" है।
- कमज़ोर और अविवेकपूर्ण परिणाम, न केवल कानून बनाने में, बल्कि उनके आवेदन में भी।
- भारतीय न्यायपालिका की कई कानूनी विद्वानों, वकीलों और स्वयं न्यायाधीशों द्वारा अत्यधिक सक्रिय भूमिका निभाने और अतिरेक के लियेआलोचना की गई है।

न्यायिक अतिरेक का प्रभाव:

- चूँकि विधायिका अपने कार्य में पिछड़ रही है, न्यायपालिका अपने कार्य से आगे निकल जाती है, जिससे विधायिका और न्यायपालिका के बीच संघर्ष की स्थिति उत्पन्न होती है। न्यायपालिका के इस तरह के अतिक्रमण का स्पष्ट प्रभाव इस प्रकार हैं:
- यह शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत के लिये खतरा है जो संविधान की भावना को कमज़ोर करता है। विधायिका और न्यायपालिका के बीच सामंजस्य की कमी है और विधायिका की निष्क्रियता की धारणा जनता में बनी हुई है।
- कुछ परिदृश्यों, जैसे- पर्यावरण, नैतिक, राजनीतिक मामलों में विशेष ज्ञान की आवश्यकता होती है जो हमेशा न्यायपालिका के पास नहीं हो सकता है। यदि इन क्षेत्रों में कोई अनुभव न होने पर भी वह निर्णय देती है तो यह निर्णय न केवल विशेषज्ञता के अभाव में कमज़ोर होगा बल्कि देश के लिये हानिकारक भी साबित हो सकता है।
- न्यायिक अतिरेक जनता द्वारा चुनी गई सरकार या प्रतिनिधित्व के प्रति न्यायपालिका की अवहेलना की अभिव्यक्ति का कारण बन सकता है। यह

लोकतांत्रिक संस्था में जनता के विश्वास को कम कर सकता है। अतः न्यायालयों का यह दायित्व है कि वे अपने अधिकार क्षेत्र में रहें और शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत को बनाए रखें।
- सर्वोच्च न्यायालय ने स्वयं वर्ष 2007 में अन्य अदालतों को न्यायिक संयम बरतने की याद दिलाई है। इसमें कहा गया है, "न्यायाधीशों को अपनी सीमाएँ पता होनी चाहिये और सरकार को चलाने की कोशिश नहीं करनी चाहिये। उनमें विनम्रता होनी चाहिये सम्राटों की तरह व्यवहार नहीं करना चाहिये।" इसके अलावा इसने कहा, "न्यायिक सक्रियता के नाम पर न्यायाधीश अपनी सीमाओं को पार नहीं कर सकते हैं और उन शक्तियों पर कब्ज़ा करने की कोशिश नहीं कर सकते जो राज्य के दूसरे अंग से संबंधित हैं"।

न्यायिक अतिरेक के उदाहरण:

- न्यायिक अतिरेक का एक प्रसिद्ध मामला फिल्म जॉली एलएलबी II की सेंसरशिप है। मामला एक रिट याचिका के रूप में दायर किया गया था और आरोप लगाया कि फिल्म ने कानूनी पेशे को एक मजाक के रूप में चित्रित किया, जिससे यह अवमानना और उकसाने वाला कार्य बन गया। बॉम्बे उच्च न्यायालय ने फिल्म देखने और उस पर रिपोर्ट देने के लिये तीन व्यक्तियों की एक समिति नियुक्त की। इसे अनावश्यक माना गया, क्योंकि फिल्म प्रमाणन बोर्ड पहले से मौजूद है और सेंसर करने की शक्ति उसमें निहित है। समिति की रिपोर्ट के आधार पर निर्देशकों ने फिल्म के चार सीन हटा दिये। इसे अनुच्छेद 19(2) के उल्लंघन के रूप में देखा गया, क्योंकि इसने भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर प्रतिबंध लगाया था।
- सड़क सुरक्षा के बारे में एक जनहित याचिका पर सर्वोच्च न्यायालय ने किसी भी राष्ट्रीय या राज्य राजमार्ग के 500 मीटर के दायरे में खुदरा दुकानों, रेस्त्रां, बार में शराब की बिक्री पर प्रतिबंध लगा दिया। न्यायालय के सामने ऐसा कोई सबूत पेश नहीं किया गया जिससे पता चलता हो कि राजमार्गों पर शराबबंदी का संबंध मौतों की संख्या से है। इस फैसले से राज्य सरकारों को राजस्व का नुकसान भी हुआ तथा रोज़गार का भी नुकसान हुआ। मामले को न्यायिक अतिरेक के रूप में देखा गया क्योंकि मामला प्रशासनिक था जिसके लिये कार्यकारी ज्ञान की आवश्यकता थी।

यह कैसे प्रकट होती है?

न्यायिक सक्रियता:

- **न्यायिक समीक्षा के माध्यम से**
  - न्यायिक समीक्षा वह सिद्धांत है जिसके तहत न्यायपालिका द्वारा विधायी और कार्यकारी कार्यों की समीक्षा की जाती है।
  - न्यायिक समीक्षा आधुनिक सरकारी व्यवस्था में नियंत्रण और संतुलन का एक उदाहरण है।
  - न्यायिक समीक्षा को भारत के संविधान में संयुक्त राज्य अमेरिका के संविधान से अपनाया गया है।
  - यह सर्वोच्च न्यायालय को किसी भी कानून की संवैधानिकता की जाँच करने की शक्ति देती है और यदि ऐसा कानून संविधान के प्रावधानों से असंगत पाया जाता है तो न्यायालय कानून को असंवैधानिक घोषित कर सकता है।
- **जनहित याचिका के माध्यम से:**
  - जनहित याचिका का अर्थ है जनहित की सुरक्षा के लिये अदालत में दायर एक मुकदमा।
  - जनहित याचिका के कारण भारत में न्यायिक सक्रियता को महत्त्व मिला। इसे किसी कानून या अधिनियम में परिभाषित नहीं किया गया है।
  - भारत में शुरू में समाज के वंचित वर्ग,जो गरीबी और अज्ञानता के कारण न्यायालयों से न्याय मांगने की स्थिति में नहीं थे, की स्थिति में सुधार लाने के लिये जनहित याचिका का सहारा लिया गया था।
  - न्यायमूर्ति पी.एन. भगवती और वी.आर. कृष्णा अय्यर ने देश के सर्वोच्च न्यायालय का दरवाज़ा खटखटाने के इस रास्ते को बढ़ावा देने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है।
- **संवैधानिक व्याख्या के माध्यम से:**
  - संवैधानिक व्याख्या, विवादों को हल करने का प्रयास करने वाले लोगों के लिये उपलब्ध संविधान
  - व्याख्या के संभावित स्रोतों में सामान्य सामाजिक और राजनीतिक संदर्भ सहित संविधान का पाठ, इसका "मूल इतिहास" शामिल है।
  - संवैधानिक अधिकारों को सुनिश्चित करने के लिये अंतर्राष्ट्रीय विधियों तक पहुँच के माध्यम से:
    - न्यायालय अपने निर्णयों में विभिन्न अंतर्राष्ट्रीय विधियों का उल्लेख करता है।
    - यह कार्य सर्वोच्च न्यायालय द्वारा नागरिकों के अधिकारों को सुनिश्चित करने के लिये किया जाता है।
    - अंतर्राष्ट्रीय कानून को कई मामलों में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों द्वारा संदर्भित किया जाता है। उदाहरण: हाल ही में सर्वोच्च न्यायालय ने जीजा घोष बनाम भारत संघ मामले में विकलांग व्यक्ति के सम्मान के साथ जीने के अधिकारों की पुष्टि की। न्यायालय ने संधि के कानून, 1963 पर वियना कन्वेंशन को रेखांकित किया, जिसके लिये अंतर्राष्ट्रीय प्रतिबद्धताओं का पालन करने हेतु भारत के आंतरिक कानून की आवश्यकता है।

न्यायिक संयम:

- संविधान लिखने वालों के मूल इरादे का जिक्र करते हुए:
  - न्यायाधीश संविधान के लेखकों की मूल मंशा को देखते हैं।
  - न्यायाधीश
  - मूल संविधान की भाषा में कोई भी परिवर्तन केवल संवैधानिक संशोधनों द्वारा ही किया जा सकता है।
- **मिसाल/उदाहरण के ज़रिये:**
  - मिसाल का मतलब पिछले मामलों में दिये गए फैसलों से है।
  - नीतियों को तय करने के लिये विधायिका और कार्यपालिका को छोड़कर:
    - न्यायिक संयम का अभ्यास तब किया जाता है जब न्यायालय नीति निर्धारण को दूसरों पर छोड़ देता है।
    - न्यायालय आमतौर पर संसद या किसी अन्य संवैधानिक निकाय द्वारा संविधान की व्याख्याओं का उल्लेख करते हैं।

वे कैसे भिन्न होते हैं?

न्यायिक सक्रियता बनाम न्यायिक संयम:

- **अर्थ के आधार पर:**
  - **न्यायिक सक्रियता:** समकालीन मूल्यों और शर्तों की वकालत करने के लिये संविधान की व्याख्या।
  - **न्यायिक संयम:** किसी कानून को रद्द करने के लिये न्यायाधीशों की शक्तियों को सीमित करना।
- **लक्ष्यों के आधार पर:**
  - **न्यायिक संयम:** न्यायाधीश और न्यायालय मौजूदा कानून को संशोधित करने के बजाय उस कानून की समीक्षा को प्रोत्साहित करते हैं, जबकि
  - **न्यायिक सक्रियता में** वे कुछ कृत्यों या निर्णयों को रद्द करने की शक्ति का प्रयोग करते हैं।
- **उद्देश्य के आधार पर:**
  - न्यायिक सक्रियता न्यायाधीशों को संविधान बनाने वालों के मूल इरादे से परे देखना चाहिए।
  - न्यायिक संयम में न्यायाधीशों को संविधान के लेखकों की मूल मंशा को देखना चाहिए।
- **शक्ति के आधार पर:**
  - न्यायिक सक्रियता में न्यायाधीशों को किसी भी अन्याय के मामले में सुधार के लिये अपनी शक्ति का उपयोग करने की आवश्यकता होती है, खासकर जब अन्य संवैधानिक निकाय कार्य नहीं कर रहे हों।
  - न्यायिक संयम एक कानून को खत्म करने के लिये न्यायाधीशों की शक्तियों को सीमित कर रहा है।
- **उनकी भूमिका के आधार पर:**
  - किसी व्यक्ति के अधिकारों की सुरक्षा, नागरिक अधिकार, सार्वजनिक नैतिकता और राजनीतिक अन्याय जैसे मुद्दों पर सामाजिक नीतियाँ बनाने में न्यायिक सक्रियता की एक बड़ी भूमिका है।
  - न्यायिक संयम सरकार, न्यायपालिका, कार्यपालिका और विधायिका की तीन शाखाओं के बीच संतुलन बनाए रखने में मदद करता है।

निष्कर्ष:

- भारत में न्यायपालिका ने अपनी सक्रियता, विशेष रूप से जनहित याचिका के माध्यम से सक्रिय भूमिका निभाई है। इसने समाज के वंचित वर्गों के अधिकारों को बहाल किया है।
- सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालयों ने प्रगतिशील सामाजिक नीतियों के पक्ष में काम किया है और नागरिक न्यायपालिका की संस्था का बहुत सम्मान करते हैं।
- हालाँकि लोकतंत्र में शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत और सरकार के तीनों अंगों की वैधता को बनाए रखना महत्त्वपूर्ण है।
  - यह तभी संभव हो सकता है जब कार्यपालिका और विधायिका चौकस और क्रियाशील हों।
  - साथ ही न्यायपालिका को उन गतिविधियों के क्षेत्रों में कदम रखने से सावधान रहना चाहिये जो इससे संबंधित नहीं हैं।

PDF Refernece URL: https://www.drishtiias.com/hindi/printpdf/judicial-activism-restraint-overreach